① प्रकृति (Prakriti)

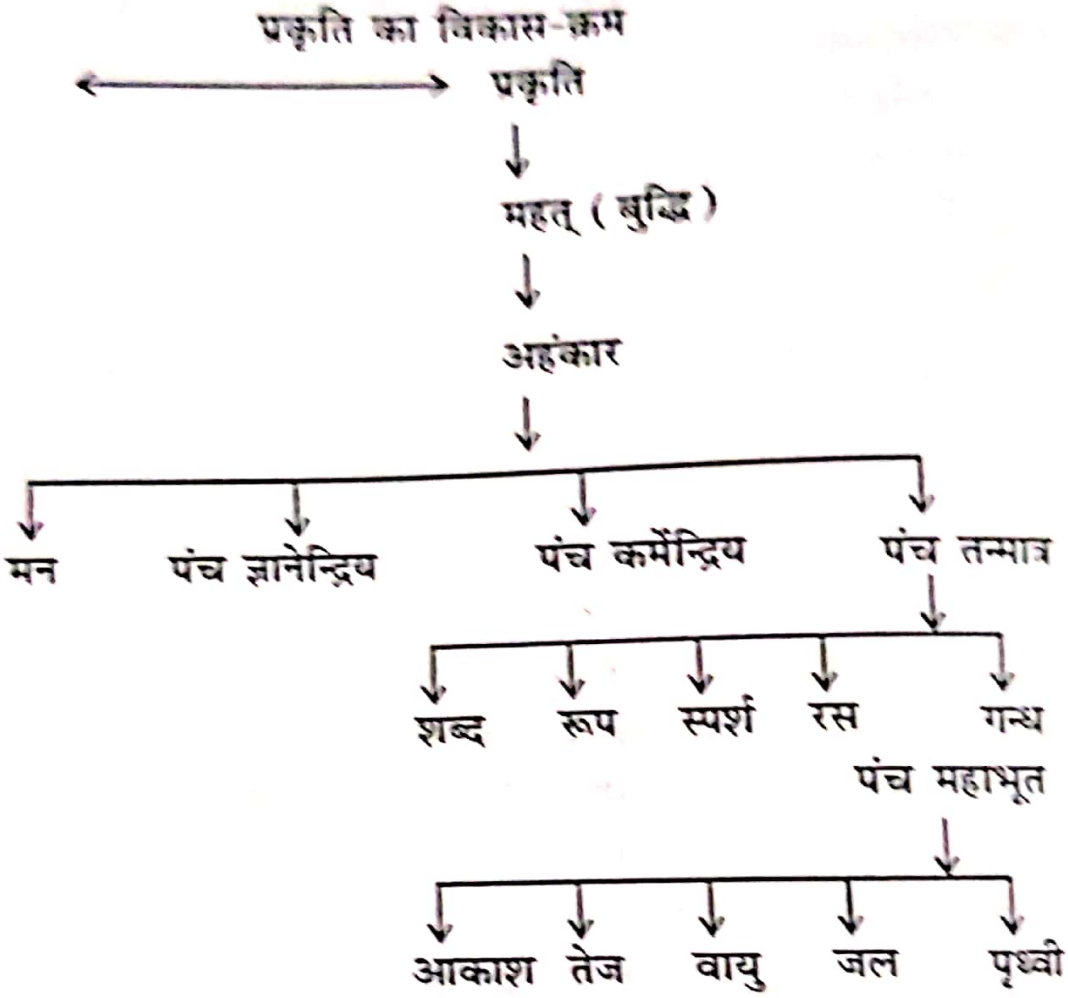

सांख्य दर्शन में व्यक्त अव्यक्त तथा ज्ञ तीन तत्त्वों को स्वीकार किया गया है। परन्तु कारण रूप में सांख्य दर्शन प्रकृति तथा पुरुष दो तत्त्वों को ही अनादि तथा अनन्त मानता है। अव्यक्त तत्त्व को ही मूल प्रकृति कहा गया है। ज्ञ तत्त्व को पुरुष कहा गया है। बुद्धि, अहंकार, तन्त्रमात्र, भूत पदार्थ व्यक्त तत्त्व हैं।

अब पहले प्रकृति के स्वरूप की व्याख्या करते हैं।

सांख्य दर्शन यथार्थ रूपभेद को स्वीकार करता है। यह सिद्धान्त एक ऐसी मूल सामग्री तक ले जाता है जिसका रूप भेद अर्थात् विकार यह पूर्ण सृष्टि, जगत् है। जगत् की सभी वस्तुएँ–शरीर, इन्द्रिय, मन, बुद्धि आदि कार्य-द्रव्य हैं जो कि भूत द्रव्यों अर्थात् सामग्री के मल से उत्पन्न होते हैं। यह जगत्, सृष्टि

Scanned by CamScanner

कारण कार्य का प्रवाह है, धारा है। इसलिये इस धारा का मूल कारण होना अनिवार्य है। यह कारण क्या है? क्या कारण आत्मा या पुरुष नहीं है, क्योंकि वास्तव में न तो किसी वस्तु का कार्य होता है और न ही कारण। इसलिये जगत् का कारण आत्मा अथवा चेतना से परे कोई जड़ पदार्थ है। चार्वाक, जैन, बौद्ध, न्याय वैशषिक दर्शनों को अनुसार पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि (तेज, प्रकाश) के परमाणु ही संसार के सारे विषयों के कारण स्वरूप हैं। परन्तु सांख्य दर्शन इस मत को स्वीकार नहीं करता। उसके अनुसार मन, बुद्धि, अहंकार, आदि सूक्ष्मों तत्त्वों का उत्पत्ति भौतिक परमाणुओं से नहीं हो सकती। इसलिये जगत् का मूल कारण ऐसा होना चाहिए जो जड़-पदार्थ होने के साथ-साथ अति सूक्ष्म भी हो। उससे सूक्ष्म अन्य कुछ न हो। वह अनादि, अनन्त तथा विभु हो तथा वह जगत् के पदार्थों वस्तुओं का कारण हो। उससे वस्तुएँ उत्पन्न होती रहें। इस मूल कारण को, सांख्य दर्शन में प्रकृति कहा गया है। यह सभी वस्तुओं द्रव्यों, पदार्थों का मूल कारण है, परन्तु स्वयं अनादि है। इसका कोई आधार नहीं, इसका मूल कारण कोई नहीं है।

सभी वस्तुओं विषयों का अनादि मूल-कारण होने के कारण यह प्रकृति नित्य तथा निरपेक्ष है, क्योंकि सापेक्ष तथा अनित्य पदार्थ जगत् का मूल कारण नहीं हो सकते। मन, बुद्धि, अहंकार, महत आदि सूक्ष्म कार्यों का आधार होने के कारण प्रकृति एक शक्तिशाली अनन्त तथा सूक्ष्म से सूक्ष्म शक्ति है जिससे जगत् की रचना सृष्टि, प्रलय का चक्र धारा-प्रवाह लगातार चलता रहता है।

प्रकृति जड़ भौतिक है। यह अचेतन है, यह अज, स्वतन्त्र, अनादि, नित्य, निरपेक्ष निरवयव, एक है। यह उत्पत्ति तथा प्रलय से परे हैं। यह अव्यक्त तथा अप्रत्यक्ष है। इसका ज्ञान अनुमान-जन्य है। यह जड़ होते हुए भी गतिवान है क्योंकि उसमें रजस् गुण है। यह प्रधान कहलाता है, क्योंकि यह सृष्टि का प्रथम तत्त्व है।

सांख्य की प्रकृति का स्वरूप लगभग वैसा ही है जैसाकि शंकर की अविद्या या माया का है। यह शक्ति है। प्रकृति के धर्म ईश्वर कृष्ण ने सांख्य कारिका में प्रकृति के वे धर्म बताये हैं। प्रकृति सत्त्व, रजस्, तमस् तीन गुणों से सम्पन्न है। यह अचेतन तथा विवेकहीन है। यह भोग्या है भोक्ता नहीं यह विषय है, विषयी नहीं है। प्रकृति ही इस सृष्टि की जन्मदाता है। ये छः धर्म व्यक्त पदार्थों में भी पाये जाते हैं।

Scanned by CamScanner

ईश्वर कृष्ण ने सांख्य कारिका में आगे बताया कि प्रकृति के कुछ ऐसे भी धर्म है जो कि अन्य पदार्थों में नहीं होते। वे भी धर्म हैं—आधारहीन, नित्य, सर्वव्यापी, क्रियाविहीन, एक अनाश्रय, अलय (अलिंग), निरवयव, स्वतन्त्र। इस प्रकार प्रकृति के कुल पन्द्रह धर्म हैं।

प्रकृति के गुण—प्रकृति के तीन गुण हैं, वे हैं—सत्त्व, रजस् तथा तमस्। वास्तव में सांख्य दर्शन इन तीन गुणों—सत्त्व, रजस तथा तमस की साम्यावस्था को प्रकृति कहता है। प्रकृति के ये गुण धर्म नहीं क्योंकि सांख्य दर्शन में प्रकृति के पन्द्रह धर्म माने हैं जिनको ऊपर पहले बता दिया गया है। ये तीन गुण द्रव्य हैं। जब प्रकृति का विश्लेषण किया जाये तो उसमें ये तीन प्रकार के द्रव्य मिलते हैं, आधुनिक विज्ञान भी तो इन गुणों को स्वीकार करते हैं जैसा कि विज्ञान भी यांत्रिक गुण, ताप गुण, विद्युत-चुम्बकीय आदि गुणों को प्रकृति में स्वीकार कर रही है। ये सत्त्व, रजस, तमस त्रिगुण हैं। ये प्रकृति के उपादान तत्त्व हैं। इनको गुण इसलिये भी कहा जाता है, क्योंकि ये रस्सी के तीन रेशों के समान आपस में मिलकर पुरुष को बांधते हैं।

गुण सूक्ष्म हैं। इनको इन्द्रियों से नहीं जाना जा सकता। इनका ज्ञान अनुमान से प्राप्त होता है। सांख्य के अनुसार गुणों के कार्यों अथवा प्रभावों से इनका अनुमान लगाया जाता है। ये प्रभाव सुख-दुःख, मोह अथवा उदासीनता का है। सांख्य दर्शन के अनुसार प्रत्येक विषय में ये गुण आते हैं चाहे इनका अनुपात, तथा प्रभाव प्रत्येक विषय में भिन्न-भिन्न हो, जैसे चीनी एक व्यक्ति को सुख देती है, किसी को दुःख देती है, कोई उसके प्रति उदासीन है तथा किसी को वह मोहित करती है।

सत्त्व गुण—सत्त्व गुण हलका-फुलका, प्रकाशक तथा आनन्द रूपी होता है। सृष्टि में यह प्रकाश रूप, सफेद का प्रतीक है। जीव को इसी के कारण ज्ञान प्राप्त होता है। मन, बुद्धि, अहंकार, महत तेज में प्रकाश इसी के कारण है। मोक्ष प्राप्ति में भी यही सहायक होता है। आनन्द उल्लास, हर्ष, संतोष, तृप्ति, सुख आदि इसी के कार्य रूप हैं। इसी के कारण इन्द्रियाँ विषयों को ग्रहण करती हैं। जीव में सत्त्व गुण के बढ़ने पर ज्ञान की उत्पत्ति होती है। श्रीमद्भागवद्गीता में सत्त्व गुण को निर्मल, प्रकाशक तथा ज्ञानमय कहा गया है। गीता में आगे कहा गया है, "जब शरीर के सम्पूर्ण द्वारों में प्रकाश तथा ज्ञान की उत्पत्ति होवे, तब यह समझो कि सत्त्व गुण बढ़ रहा है।"

Scanned by CamScanner

रजस्गुण—रजस् गुण लालिमा का प्रतीक है। शरीर में यह रक्त, शौर्य, शक्ति, साहस का प्रतीक है। यह कर्म का प्रवर्तक है। रजस् गुण स्वचलित होता है। इसी के कारण ही प्रकृति को चलायमान कहते हैं। इसी के परिणाम स्वरूप के कारण ही वायु चलती है। इन्द्रियाँ, वस्तुएं विषयों की ओर आकर्षित होती हैं, दौड़ती हैं। मन चंचल इसी गुण के कारण होता है। सत्त्व गुण तथा तमस् गुण दोनों स्वयं निष्क्रिय होते हैं, उनको गति रजस् गुण से ही प्राप्त होती है। रजस् गुण दुःख देता है, शारीरिक तथा मानसिक कष्ट पहुँचाता है। यह गुण रागात्मक होता है। यह जीवन को कर्मों में बांधता है। इसकी जीव में बढ़ोत्तरी होने पर लोभ, तृष्णा, प्रवृत्ति, कर्म-आरम्भ, अक्षम, स्पृष्ट आदि बढ़ते हैं। राजस कर्म का फल दुःख है।

तमस्गुण—यह सृष्टि में आया, अविद्या, अन्धकार का सूचक है। जीव में अविद्या, अज्ञान, आलस्य, निष्क्रियता का सूचक है। तमस् गुण के उदय होने पर आलस्य, सुस्ती, मूर्च्छा नींद, शरीर का भारीपन आता है। आलस्य, अज्ञान, प्रमाद उत्पन्न होते हैं। महाभारत के अनुसार तमोगुण से कर्मेन्द्रियाँ उत्पन्न होती हैं। तथा पांच महाभूत उत्पन्न होते हैं। तमस् गुण सत्त्व गुण का विरोधी गुण हैं। इसी के कारण जीवन में तथा सृष्टि में बाधाएं अथवा रुकावटें उत्पन्न होती हैं।

गुणों में आपसी सम्बन्ध—सत्त्व, रजस् तथा तमस् गुणों में आपसी सम्बन्ध है। यह सम्बन्ध सहयोग तथा विरोधता का है। ये गुण अकेले-अकेले नहीं रह सकते तथा कार्य भी सुचारू रूप से नहीं कर सकते। सांख्यकारिका के अनुसार प्रत्येक गुण एक दूसरे को दबाने का प्रयास करता रहता है। जिस गुण की प्रधानता होगी अथवा बढ़ोत्तरी होगी अथवा वह अन्य गुणों को दवा लेगा। वैसा ही उस वस्तु या जीव का स्वभाव बन जायेगा। ये गुण निरन्तर परिवर्तनशील होते हैं, ये स्थिर नहीं, विकार इनका स्वभाव है। इन्हीं के कारण ही सृष्टि परिवर्तनशील होती है। जीव में भी सुख, दुःख आनन्द आते-जाते रहते हैं। इन गुणों के कारण जगत् की वस्तुओं जीवों आदि को इष्ट, अनिष्ट तथा तटस्थ तीन वर्गों में वांटा जाता है।

गुणों के परिणाम—सांख्य दर्शन के अनुसार सत्त्व, रजस्, तमस—इन तीनों गुणों के दो परिणाम हैं। वे हैं—सरूप तथा विरूप सारूप परिणाम—सारूप परिणाम की अवस्था में तीनों गुणों साम्यावस्था में होते हैं। वे अलग-अलग रहते हैं। अतः वे कोई कार्य नहीं कर सकते। ये गुण अव्यक्त अवस्था में रहते हैं। वे अपने-अपने

Scanned by CamScanner

स्वरूप में लीन रहते हैं। यह प्रकृति की अवस्था है जो कि सृष्टि से पूर्व तथा प्रलय के उपरान्त की अवस्था है।

विरूप परिणाम–यह अवस्था सृष्टि के आरम्भ से लेकर प्रलय तक की अवस्था है। इस अवस्था में गुणों में क्षोभ रहता है। प्रत्येक गुण एक-दूसरे को दबाने का प्रयास करता है। इस गुणक्षोभ से ही सृष्टि की प्रत्येक वस्तु की उत्पत्ति होती है। गुण क्षोभ सृष्टि का कारण है।

प्रकृति के अस्तित्व के प्रमाण

ईश्वर कृष्ण ने सांख्यकारिका में प्रकृति के अस्तित्व को सिद्ध करने के लिये निम्नलिखित प्रमाण दिये हैं–

भेदानां परिमाणात–जगत् की समस्त वस्तुएं सीमित, परतन्त्र, साधार, सापेक्ष तथा सान्त हैं। इसलिये उनका मूल कारण असीम, स्वतंत्र, निराधार, निरपेक्ष अनन्त, निरवयव होना चाहिए, जो प्रकृति ही जगत का मूल कारण है।

भेदानां समन्वयता–जगत् की वस्तुओं में अनेकता है, परन्तु फिर भी उनमें कुछ सामान्य गुण हैं जो सुख, दुःख, मोह, राग, द्वेष, आनन्द आदि को उत्पन्न करते हैं। ये गुण त्रिगुणी प्रकृति के ही हैं जो सबको एक सूत्र में बांधती है। प्रकृति से ही सब कुछ उत्पन्न होता है तथा यह ही उन सबमें समन्वय रखती है।

भेदनाम् शक्तितः प्रवृत्तेश्च–सभी कार्य उन कारणों से उत्पन्न होते हैं जिनमें वे अव्यक्त रूप अथवा बीजरूप में विद्यमान होते हैं। विकास या उत्पत्ति का अर्थ अव्यक्त का व्यक्त होना है। जगत् को उत्पन्न करने वाली शक्ति जगत् के मूल कारण में निहित होनी चाहिए। यह शक्ति प्रकृति में ही है, अन्य किसी में नहीं है।

भेदानाम् कारणकार्य विभागात्–कारण कार्य के रूप में तत्त्वों का विभाग किया जाता है जैसे अहंकार कार्य तथा महत् कारण, महत, विकार शृंखला का प्रथम कोटी है; परन्तु इसका भी तो कोई कारण होना चाहिए; सभी व्यक्त पदार्थों का कारण होता है। परन्तु मूल कारण तो अव्यक्त होना चाहिए, वह निराधार, निरवयव होना चाहिए, अतः यह मूल कारण ही प्रकृति है।

भेदानां अविभागाद् वैश्वरूपस्य–सांख्य दर्शन के अनुसार कार्य तथा कारण में तादात्म्य है। सारूप परिणाम के समय अथवा प्रलय के समय सभी कार्य, कारण में लीन होकर एक मालूम होते हैं, वही अव्यक्त अवस्था प्रकृति है। वही उसकी साम्यावस्था है।

Scanned by CamScanner